हाशिये पर बच्चे

शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए टूलकिट

DESHKAL SOCIETY

परिकल्पना और संयोजन
संजय कुमार
पी. डी. सिंह
अरुण कुमार

संयोजन सहयोग
नारायण कुमार
रामराज मांझी

कॉपी संपादक
राधेश्याम मंगोलपुरी

शब्द-संयोजन
ओम प्रकाश ठाकुर

प्रकाशन वर्ष: 2001
© **देशकाल प्रकाशन**

डिजाइन और मुद्रण:
सिस्टम्स विजन
E-mail : systemsvision@gmail.com

प्रकाशक
देशकाल प्रकाशन
220, एस. एफ. एस. फ्लैट्स,
मुखर्जीनगर, दिल्ली-110009
टेलिफैक्स : 011-27654895
E-mail : deshkal@gmail.com
Website : www.deshkaledu.org
www.deshkalindia.com

(इस परियोजना के लिए डी. एफ. आइ. डी. (इंडिया) से आर्थिक सहयोग मिला है। इसमें व्यक्त किए गए विचार देशकाल सोसाइटी की परियोजना टीम के हैं, इसका संबंध डी. एफ. आइ. डी. (इंडिया) से नहीं है।)

विषय सूची

1. बसावटों का मानचित्रण 0
2. समाज और कार्य 0
3. जूठन 0
4. संस्कार 0
5. रामदेव मांझी का लड़का 0
6. बाल मजदूरी 0
7. कृषक समुदाय और शिक्षा 0
8. लोक ज्ञान 0
9. विद्यालय से समुदाय और समुदाय से विद्यालय 0
10. नई सीख 0

भूमिका

कमजोर एवं वंचित समुदायों (जैसे – लड़कियों, अनुसूचित जाति-जनजाति, धार्मिक अल्पसंख्यकों) के बच्चों के नामांकन में लगातार वृद्धि हुई है। इसके फलस्वरूप पिछले वर्षों प्राथमिक विद्यालयों की कक्षाओं की सामाजिक बनावट व रंग-ढंग में काफी बदलाव आया है। शिक्षकों में इस सामाजिक विविधता की शायद ही कोई समझ विकसित हुई है। लगातार बढ़ रहे विविध पृष्ठभूमि के इन छात्रों को पढ़ाने के लिए उन्हें कैसे तैयार करें, यह एक ज्वलंत सवाल है। इन शिक्षकों के बीच बहुत सारे मिथ व किंवदंतियाँ प्रचलित हैं जो भिन्न सामाजिक-आर्थिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के बच्चों के सीखने के अनुभव पर बुरा प्रभाव डालती हैं। उदाहरण के लिए – सामान्यत: यह स्वीकृत है कि आखिरकार बच्चे बच्चे हैं..... वे एक ही हैं। यह मान्यता इस तथ्य को नजरअंदाज करती है कि बच्चे न सिर्फ अपनी व्यक्तिगत पहचान और अनुभवों के साथ विद्यालय आते हैं बल्कि अपने समुदाय के एक सदस्य के रूप में पलते-बढ़ते हुए उनकी जो चेतना विकसित होती है उसके साथ भी आते हैं। एक दूसरी मान्यता जो भिन्न पृष्ठभूमि के बच्चों के बारे में है वह है कि बच्चों की सीखने की क्षमता उन माता-पिता की पृष्ठभूमि और उनकी वर्तमान स्थिति पैतृकता से निर्धारित होती है, न कि कक्षा में जो कुछ पढ़ाया जा रहा है उससे। फलस्वरूप, शिक्षकों में ऐसे बच्चों की शिक्षण-उपलब्धि के बारे में बहुत ही कम उम्मीद होती है और वे इनके प्रति उपेक्षा का भाव विकसित कर लेते हैं। अत: इन भिन्न सामाजिक-आर्थिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के बच्चों के बारे में शिक्षकों के ऐसे विचारों एवं मान्यताओं को दुरुस्त करने के लिए एक कार्य-योजना की आवश्यकता है।

यह टूलकिट शिक्षक-प्रशिक्षण की इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए तैयार किया गया है। विविध वंचित समूहों के बच्चों के सीखने के तौर-तरीकों पर सकारात्मक प्रभाव डालना तथा उसके नतीजों को सुनिश्चित करना इसका उद्देश्य है।

उद्देश्य

यह टूलकिट सामाजिक-आर्थिक मुद्दों को वास्तविक जीवन-स्थितियों तथा अनुभवों के संदर्भ में और गुण-दोष की पहचान के आधार पर उन मुद्दों की जांच-परख करता है। यह टूलकिट शिक्षकों की विश्लेषण-क्षमता को विकसित करने पर बल देता है। साथ ही, भिन्न सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के बच्चों के सीखने की जरूरतों, बाधाओं तथा उनके प्रदर्शन पर भी ध्यान केन्द्रित करता है। इसके महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं:

(1) विद्यालय एवं कक्षा में बच्चों के बीच भेदभाव के विविध पहलुओं को समझने में शिक्षक की मदद करना।

(2) शिक्षकों को बताना कि वे अपनी उन मान्यताओं तथा व्यवहारों की जाँच करें तथा जो विविध वंचित समूहों के बच्चों के बारे में उनके विचारों तथा संबंधों को प्रभावित करते हैं।

(3) शिक्षकों की इस तरह प्रशिक्षत करना कि वे विद्यालय तथा कक्षा के भीतर चलने वाली विविध गतिविधियों में वंचित समूहों के बच्चों को सहज मन से शामिल करें और उनके संपूर्ण व्यक्तित्व पर पूरा-पूरा ध्यान दें।

विषय

व्यक्ति, समुदाय और वृहत्तर समाज के संबंधों के इर्द-गिर्द इस टूलकिट को विकसित किया गया है। उसके मुख्य बिन्दु हैं:

(1) बसावट

(2) जाति और सामाजिक

(3) पेशा और श्रम की गरिमा

(4) स्व तथा अन्य

(5) संस्कार

(6) बाल-श्रम

(7) स्थानीय समुदाय तथा सांस्कृतिक परंपराएँ

ये विषय एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हैं। इनमें बहुत सारे मुद्दे हैं जिन पर विचार किए जाने की जरूरत है। इन विषयों को ध्यान में रखकर ही अध्यायों की रूपरेखा तैयार की गई है। इन अध्यायों को इस तरह तैयार किया गया है कि इनमें शामिल मुद्दों की गुण-दोष के अध ार पर जांच की जा सके और समाज के कमजोर व वंचित समुदाय को हाशिये पर किए जाने की प्रक्रिया को ठीक-ठीक समझा जा सके।

दृष्टांतों को इस रूप में दिया गया है कि वे स्थानीय सामाजिक-आर्थिक संदर्भों के मेल में हों। इनका मुख्य मकसद शिक्षकों को स्वयं के उन विचारों तथा व्यवहारों को जाँचने-परखने की दृष्टि पैदा करना है जिनका प्रभाव विद्यालय की कक्षाओं में विविध वंचित समूहों के बच्चों पर पड़ता है।

प्रक्रिया और उपकरण

इन अध्यायों में निम्नलिखित गतिविधियाँ शामिल हैं – लघु कहानियों तथा अनुच्छेदों का पाठ तथा उन पर विचार, प्रश्नोत्तर, व्यक्तिगत अनुभवों की साझेदारी, स्थानीय सांस्कृतिक परंपराओं से लोक-कथाओं तथा लोकगीतों का चयन, हाशिये के समुदायों के महत्वपूर्ण ऐतिहासिक व्यक्तियों के कार्यों तथा उनके जीवन-वृत्तों का संकलन व उस पर परिचर्चा आदि। इनका मुख्य उद्देश्य शिक्षकों को आपस में सोच-विचार के लिए प्रेरित करने के साथ-साथ परिचर्चा, संवाद व बातचीत के लिए माहौल बनाना है।

टूलकिट के विकास की प्रक्रिया

यह टूलकिट देशकाल सोसायटी द्वारा बिहार के गया जिले में दो ग्रामीण सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में परियोजना चलाए जाने के क्रम में प्राप्त अनुभवों के आधार पर विकसित किया गया है। परियोजना के दौरान विविध प्रक्रियाओं तथा गतिविधियों से प्राप्त आँकड़े तथा सूचनाएँ इस टूलकिट को विकसित करने की मुख्य आधार-सामग्री हैं। पहले इन मुख्य विषयों पर लघु अध्याय बनाए गए तथा उन्हें शिक्षकों को पढ़ने-सोचने तथा उन पर विचार करने के लिए दिए गए। कुछ दिनों के बाद सामूहिक बातचीत की गई ताकि उनकी टिप्पणियाँ जानी जा सकें। पुनः शिक्षकों, विद्यार्थियों, अभिभावकों, समुदाय तथा ग्राम-पंचायत प्रतिनिधियों जैसे मुख्य भागीदारों की कार्यशालाएँ आयोजित की गईं ताकि मुख्य विषयों और प्रश्नों पर संवाद व परिचर्चाएँ प्रारंभ किए जा सकें। यह भी प्रयास किया गया कि इन कार्यशालाओं व्यक्त विविध विचारों व दृष्टिकोणों की प्रकृति को पहचाना जाए। इन विभिन्न प्रक्रियाओं व गतिविधियों से प्राप्त आँकड़ों

तथा सूचनाओं को व्यवस्थित रूप से संकलित किया गया तथा टूलकिट के अध्यायों तथा मुख्य विषयों के निर्माण के लिए इनको विश्लेषित किया गया।

इस टूलकिट का विकास ग्रामीण बिहार के बच्चों की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए किया गया है। यह इस मान्यता पर आधारित है कि शिक्षक-प्रशिक्षण संदर्भ से जुड़ा होना चाहिए जिससे वह प्रासंगिक व प्रभावी हो सके। इस टूलकिट को शिक्षक-प्रशिक्षण-कार्यक्रम के एक पैकेज के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए, क्योंकि यह गहरी जड़ें जमाई मान्यताओं, पूर्वाग्रहों तथा प्रथाओं को संबोधित करता है। दरअसल यह उस शिक्षक-विकास कार्यक्रम का हिस्सा होना चाहिए जो उन्हें अपनी मान्यताओं और आचरणों की जाँच करने तथा उन पर दुबारा विचार करने में उनकी मदद कर सके।

अध्याय - 1

बसावटों का मानचित्रण

आप अपने गाँव, मुहल्ले के बारे में कितना जानते हैं?

हम जिस स्थान पर रहते हैं, उसका सामाजिक मानचित्रण वहाँ की सामाजिक वास्तविकता तथा उनके विवरणों को जानने का एक दिलचस्प तरीका हो सकता है। जिस आयु-समूह को आप अपना संदर्भ बनाने जा रहे हों, उसके आधार पर आप अपने शिक्षकों को जो कार्य सौंपने जा रहे हैं, उसमें आनेवाली दिक्कतों का निर्धारण शिक्षकों के सामान्य स्तर के आधार पर कर सकते हैं।

(i) एक सामान्य मानचित्र के साथ शुरुआत करें। शिक्षकों से गाँव के 'भू-चिह्नों' का मानचित्र बनाने को कहें। यह जरूरी नहीं कि वह पूरी तरह स्केल-पद्धति के अनुरूप हो। इसके पीछे मूल उद्देश्य यह जानना है कि बच्चे किन चीजों को गाँव का 'भू-चिह्न' मानते हैं। कुछ 'भू-चिह्न', जिनके माध्यम से बच्चे अपने

गाँव को पहचानना चाहेंगे, गहरे सामाजिक निहितार्थ वाले हो सकते हैं। कुछ भू-चिह्न भौगोलिक हो सकते हैं, जैसे – नदी, बाँध, पहाड़ी, सड़क अथवा कोई पुल। कुछ भू-चिह्न पूजा-स्थल हो सकते हैं, जैसे – मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारा। विद्यालय, पंचायत भवन, खेल-मैदान, तालाब, बाजार आदि भी इन भू-चिह्नों में शामिल हो सकते हैं। अगर शिक्षकों को प्रोत्साहित किया जाए तो वे कुछ महत्वपूर्ण पेड़ों, कुछ महत्वपूर्ण भवनों अथवा कुछ लोगों के निजी घरों को भी गाँव के भू-चिह्न के रूप में पहचानने का निर्णय ले सकते हैं।

कोशिश होनी चाहिए कि शिक्षक 'अस्पष्ट' से 'स्पष्ट' की दिशा में सोचने को अग्रसर हो सकें। जैसे-जैसे शिक्षक इन भू-चिह्नों के बारे में बताएँ, उसके आधार पर एक परिचर्चा आरंभ की जा सकती है कि गाँव के 'भू-चिह्न' के रूप में किन चीजों को लिया जाना चाहिए और किनको नहीं अथवा क्या भू-चिह्न हैं और क्या नहीं। यहाँ से आपको यह प्रवेश-बिंदु मिल सकता है कि शिक्षक अनजाने ही किन सामाजिक मूल्यों को ग्रहण करते हैं।

(ii) अगला मानचित्र गाँव में शिक्षा से संबंधित हो सकता है। शिक्षकों से कहें कि वे अधिकतम साक्षरता से न्यूनतम साक्षरता के आधार पर गाँव के विविध क्षेत्रों को लाल, हरा और फिर पीले रंग से रँगें। फिर भी यह मानचित्र पूर्णत: सही नहीं होगा। उन्हें सिर्फ वहाँ की साक्षरता के अनुरूप अपने गाँव के उत्तर, दक्षिण, पूर्व तथा पश्चिम क्षेत्र को पहचानना है। यह सही है कि वे आँकड़ों के बारे में पूर्णत: सही नहीं होंगे, किंतु यह मुख्य उद्देश्य नहीं है। थोड़ी-बहुत चर्चा के बाद वे सहमति पर पहुँचेंगे। एक सामान्य अनुमानपरक विचार ही पर्याप्त होगा।

(iii) इस अभ्यास को निम्नांकित पर भी लागू करें:

- ❑ लिंग
- ❑ प्रवास
- ❑ कार्य
- ❑ रोजगार

मानचित्रण पर चर्चा के किसी भी बिंदु पर जाति तथा वर्ग को शामिल न करें। शिक्षकों को स्वयं सामाजिक मानचित्रण करने दें। यदि वे इनको शामिल करते हैं तो इन पर चर्चा आगे बढ़ाएँ।

अध्याय – 2

समाज और कार्य

समाज तथा सामाजिक संबंधों को समझने के बहुत सारे तरीके हैं। विभिन्न लोगों द्वारा किए जानेवाले विभिन्न कार्यों के माध्यम से उन्हें समझना कम से कम दो कारणों से महत्वपूर्ण है। एक, इससे यह पता चल सकता है कि कितनी तरह की गतिविधियों से समाज गतिशील होता है। दूसरा, यह 'श्रम की गरिमा' को सामने लाने में मदद कर सकता है, जो जाति की सार्थक समझ विकसित करने में बहुत महत्वपूर्ण है। विविध जाति-समूहों के विद्यार्थियों में सहानुभूति, करुणा तथा आपसी सम्मान का भाव विकसित करने का संभवत: यह सर्वाधिक प्रभावी तरीका होगा। हालाँकि इसके साथ कुछ सावधानी बरतनी आवश्यक है।

जाति की राजनीतिक अर्थव्यवस्था, जाति-आधारित शोषण की आर्थिक/वर्गीय प्रवृत्ति तथा कार्यों की जानकारी 'विविधता में एकता' वाले मॉडल को खत्म कर देगी, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति का कार्य महत्वपूर्ण है। हालाँकि 'श्रम की गरिमा' का विचार जाति-आधारित भेद को समाप्त

करने में बड़ी भूमिका निभाएगा। बहुत सारे लोग सामाजिक मेलजोल प्राप्त करने में 'विविधता में एकता' वाले मॉडल का बहुत प्रयोग करते हैं, लेकिन आजादी के बाद के भारतीय समाज का इतिहास इस मॉडल का खोखलापन साफ जाहिर कर देता है।

इस मॉडल की सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि यह मनुष्य में गुण-दोष की पहचान की बजाय ऐसी दृष्टि विकसित करता है, जहाँ सभी 'विभिन्नताएँ' सुंदर हैं, सब कुछ संगीतमय है। स्थितियों की ऐसी योजना में 'विविधता' मूल्य-निरपेक्ष है। बढ़ई की कारीगरी तथा उच्च जाति द्वारा जारी छुआछूत दोनों को 'विविधता' के रूप में स्वीकार कर लिया जा सकता है। वगैर जाँच पड़ताल के, यह मॉडल विविधता का उत्सव मनाता है। दूसरे शब्दों में, यह मॉडल हमसे यह भी अपेक्षा करता है कि दूसरों की मान्यताओं से जो समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, उनके बारे में कुछ न बोलें। इसलिए, विधवा-विवाह की अस्वीकृति अथवा बाल-विवाह, पितृसत्तात्मकता या अंधविश्वास – सबकुछ सही है, क्योंकि यही तो विविधतापूर्ण संसार है। सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए यह एक तरह का सामाजिक अनुबंध बन जाता है, जहाँ हम एक-दूसरे की तमाम खामियों और बुराइयों को स्वीकार करने के लिए सहमत हो जाते हैं।

आपका पृष्ठ

1. अपने क्षेत्र/मुहल्ले की 24 घंटे की जीवन-शैली में शामिल विभिन्न चीजों की जितनी संभव हो, उतनी बड़ी सूची बनाएँ।

   ---

2. ऐसी गतिविधियों अथवा कार्यों की सूची बनाएँ, जिनको करनेवाले अपने बच्चों को विद्यालय नहीं भेंज सके। अथवा, ऐसे लोगों की उनके कार्यों/पेशों के आधार पर पहचान करें, जिनके बच्चे आपके विद्यालय में कुल जनसंख्या के अनुपात में बहुत नीचे हैं।

शिक्षकों के साथ गतिविधियाँ

1. शिक्षकों को उनके इलाके में किए जानेवाले सभी कार्यों/पेशों की सूची बनाने को कहें।

   (क) अलग-अलग सूचियों को एक-दूसरे से मिलाएँ।

   (ख) जाति, वर्ग, लिंग तथा धर्म के संदर्भ में भिन्नताओं को नोट करें।

   (ग) किस तरह के कार्य उनकी सूची में शामिल नहीं हैं?

   (घ) किस तरह के कार्य आसानी से उनके दिमाग में आते हैं?

   (ङ) किस तरह के कार्यों को ध्यान में लाना उनके लिए कठिन था?

   (च) अलग-अलग सूची को जोड़कर एक बड़ी सूची तैयार करें।

2. अब शिक्षकों को दो या तीन समूहों में बाँट दें। यह काम बिना योजना के होना चाहिए। अब उनसे कहें कि वे बड़ी सूची में से उनके अनुसार महत्वपूर्ण चीजों (जो उन्हें लगता है कि बहुत या कम महत्वपूर्ण हैं) को 'सर्वाधिक महत्वपूर्ण से कम महत्वपूर्ण' के क्रम में सजाएँ। अब इस पर बातचीत करें कि क्यों उन्हें कोई चीज अधिक महत्वपूर्ण लगती है तथा कुछ दूसरी चीजें कम महत्वपूर्ण। कोशिश करें कि इस बातचीत में सभी शामिल हों।

अध्याय – 3

जूठन*

हमारे मोहल्ले में एक ईसाई आते थे। नाम था सेवकराम मसीही। चूहड़ों के बच्चों को घेरकर बैठे रहते थे। पढ़ना-लिखना सिखाते थे। सरकारी स्कूलों में तो कोई घुसने नहीं देता था। सेवकराम मसीही के पास सिर्फ मुझे ही भेजा गया था। भाई तो काम करते थे। बहन को स्कूल भेजने का सवाल ही नहीं था।

मास्टर सेवकराम मसीही ने खुले, बिना कमरों, बिना टाट-चटाईवाले स्कूल में अक्षर-ज्ञान कराना शुरू किया था। एक दिन सेवकराम मसीही और मेरे पिताजी में कुछ खटपट हो गई थी। पिताजी मुझे लेकर बेसिक प्राइमरी विद्यालय गए थे, जो कक्षा पाँच तक था। वहाँ मास्टर हरफूल

*ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा लिखित जूठन से उद्धृत (पृष्ठ संख्या 12-18)

सिंह थे। उनके सामने मेरे पिताजी ने गिड़गिड़ाकर कहा था – "मास्टरजी, थारी मेहरबान्नी हो जागी जो म्हारे इस जाकत (बच्चा) कू बी दो अक्षर सिखा दोगे।"

मास्टर हरफूल सिंह ने अगले दिन आने को कहा था। पिताजी अगले रोज फिर गए। कई दिन तक स्कूल के चक्कर काटते रहे। आखिर एक रोज स्कूल में दाखिला मिल गया। उन दिनों देश को आजादी मिले आठ साल हो गए थे। गाँधी जी के अछूतोद्धार की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती थी। सरकारी स्कूलों के द्वार अछूतों के लिए खुलने शुरू हो तो गए थे, लेकिन जन-सामान्य की मानसिकता में कोई विशेष बदलाव नहीं आया था। स्कूल में दूसरों से दूर बैठना पड़ता था, वह भी जमीन पर। अपने बैठने की जगह तक आते-आते चटाई छोटी पड़ जाती थी। कभी-कभी तो एकदम पीछे दरवाजे के पास बैठना पड़ता था, जहाँ से बोर्ड पर लिखे अक्षर धुँधले दिखते थे।

त्यागियों के बच्चे 'चूहड़े का' कहकर चिढ़ाते थे। कभी-कभी बिना कारण पिटाई भी कर देते थे। एक अजीब-सी यातनापूर्ण जिंदगी थी, जिसने मुझे अंतर्मुख और चिड़चिड़ा, तुनकमिजाज बना दिया था। स्कूल में प्यास लगे तो हैंडपंप के पास खड़े रहकर किसी के आने का इंतजार करना पड़ता था। हैंडपंप छूने पर बवेला हो जाता था। लड़के तो पीटते ही थे, मास्टर लोग भी हैंडपंप छूने पर सजा देते थे। तरह-तरह के हथकंडे अपनाए जाते थे ताकि मैं स्कूल छोड़कर भाग जाऊँ, और मैं भी उन्हीं कामों में लग जाऊँ, जिनके लिए मेरा जन्म हुआ था। उनके अनुसार, स्कूल आना मेरी अनधिकार चेष्टा थी।

मेरी ही कक्षा में राम सिंह और सुक्खन सिंह भी थे। राम सिंह जाति से चमार था और सुक्खन सिंह झींवर। राम सिंह के पिताजी और माँ खेतों में मजदूरी करते थे। सुक्खन सिंह के पिताजी इंटर कॉलेज में चपरासी थे। हम तीनों साथ-साथ पढ़े, बड़े हुए। बचपन के खट्टे-मीठे अनुभव एक साथ समेटे थे। तीनों पढ़ने में हमेशा आगे रहे, लेकिन जाति का छोटापन कदम-कदम पर छलता रहा।

बरला गाँव में कुछ मुसलमान त्यागी भी थे। त्यागियों को तगा भी कहते थे। मुसलमान तगाओं का व्यवहार भी हिंदुओं जैसा ही था। कभी कोई अच्छा साफ-सुथरा कपड़ा पहनकर यदि निकले तो फब्तियाँ सुननी पड़ती थीं। ऐसी फब्तियाँ जो तीर की तरह भीतर तक उतर जाती थीं। ऐसा हमेशा होता था। साफ-सुथरे कपड़े पहनकर कक्षा में जाओ तो साथ के लड़के कहते – "अबे चूहड़े, नए कपड़े पहनकर आया है।" मैले-पुराने कपड़े पहनकर स्कूल जाओ तो कहते – "अबे चूहड़े के, दूर हट, बदबू आ रही है।"

अजीब हालात थे। दोनों ही स्थितियों में अपमानित होना पड़ता था।

चौथी कक्षा में था। हेडमास्टर बिशम्बर सिंह की जगह कलीराम आ गए थे। उनके साथ एक और मास्टर आए थे। उनके आते ही हम तीनों के बहुत बुरे दिन आ गए थे। बात-बेबात

पर पिटाई हो जाती थी। राम सिंह तो कभी-कभी बच भी जाता था, लेकिन सुक्खन सिंह और मेरी पिटाई तो आम बात थी। मैं वैसे भी काफी कमजोर और दुबला-पतला था उन दिनों।

सुक्खन के पेट पर पसलियों के ठीक ऊपर एक फोड़ा हो गया था, जिससे हर वक्त पीप बहती रहती थी। कक्षा में वह अपनी कमीज ऊपर की तरफ इस तरह मोड़कर रखता था, ताकि फोड़ा खुला न रहे। एक तो कमीज पर पीप लगने का डर था, दूसरे मास्टर की पिटाई के समय फोड़े को बचाया जा सकता था।

एक दिन मास्टर ने सुक्खन सिंह को पीटते समय उस फोड़े पर ही एक घूँसा जड़ दिया। सुक्खन की दर्दनाक चीख निकली। फोड़ा फूट गया था। उसे तड़पता देखकर मुझे भी रोना आ गया था। मास्टर हम लोगों को रोता देखकर लगातार गालियाँ बक रहा था। ऐसी गालियाँ जिन्हें यदि शब्दबद्ध कर दूँ तो हिंदी के आभिजात्य पर धब्बा लग जाएगा, क्योंकि मेरी एक कहानी 'बैल की खाल' में एक पात्र के मुँह से गाली दिलवा देने पर हिंदी के कई बड़े लेखकों ने नाक-भौं सिकोड़ी थी। संयोग से गाली देनेवाला पात्र ब्राह्मण था। ब्राह्मण यानी ब्रह्म का ज्ञाता, और गाली.....!

अध्यापकों का आदर्श रूप जो मैंने देखा, वह अभी तक मेरी स्मृति से मिटा नहीं है। जब भी कोई आदर्श गुरु की बात करता है तो मुझे वे तमाम शिक्षक याद आ जाते हैं जो माँ-बहन की गालियाँ देते थे। सुंदर लड़कों के गाल सहलाते थे और उन्हें अपने घर बुलाकर उनसे वाहियातपना करते थे।

एक रोज हेडमास्टर कलीराम ने अपने कमरे में बुलाकर पूछा – "क्या नाम है बे तेरा?"

"ओमप्रकाश।" मैंने डरते-डरते धीमे स्वर में अपना नाम बताया। हेडमास्टर को देखते ही बच्चे सहम जाते थे। पूरे स्कूल में उनकी दहशत थी।

"चूहड़े का है?" हेडमास्टर का दूसरा सवाल उछला।

"जी!"

"ठीक है..... वह जो सामने शीशम का पेड़ खड़ा है, उस पर चढ़ जा और टहनियाँ तोड़के झाड़ू बणा ले। पत्तोंवाली झाड़ू बणाना। और पूरे स्कूल कू ऐसा चमका दे जैसे सीसा। तेरा तो यो खानदानी काम है। जा....फटाफट लग जा काम पे।"

हेडमास्टर के आदेश पर मैंने स्कूल के कमरे, बरामदे साफ कर दिए। तभी वे खुद चलकर आए और बोले, "इसके बाद मैदान भी साफ कर दे।"

लंबा-चौड़ा मैदान मेरे वजूद से कई गुना बड़ा था, जिसे साफ करने से मेरी कमर दर्द करने लगी थी। धूल से चेहरा, सिर अँट गया था। मुँह के भीतर धूल घुस गई थी। मेरी कक्षा में बाकी बच्चे पढ़ रहे थे और मैं झाड़ू लगा रहा था। हेडमास्टर अपने कमरे में बैठे थे, लेकिन निगाह

मुझ पर टिकी थी। पानी पीने तक की इजाजत नहीं थी। पूरा दिन मैं झाड़ू लगाता रहा। तमाम अनुभवों के बीच कभी इतना काम नहीं किया था। वैसे भी घर में भाइयों का मैं लाड़ला था।

दूसरे दिन स्कूल पहुँचा। जाते ही हेडमास्टर ने फिर झाड़ू के काम पर लगा दिया। पूरे दिन झाड़ू देता रहा। मन में एक तसल्ली थी कि कल से कक्षा में बैठ जाऊँगा।

तीसरे दिन मैं कक्षा में जाकर चुपचाप बैठ गया। थोड़ी देर बाद उनकी दहाड़ सुनाई पड़ी, "अबे, ओ चूहड़े के! मादरचोद, कहाँ घुस गया..... अपनी माँ....."

उनकी दहाड़ सुनकर मैं थर-थर काँपने लगा था। एक त्यागी लड़के ने चिल्लाकर कहा, "मास्साब, वो बैट्ठा है कोणे में।"

हेडमास्टर ने लपककर मेरी गर्दन दबोच ली थी। उनकी उँगलियों का दबाव मेरी गर्दन पर बढ़ रहा था। जैसे कोई भेड़िया बकरी के बच्चे को दबोचकर उठा लेता है, कक्षा से बाहर खींचकर उन्होंने मुझे बरामदे में ला पटका। चीखकर बोले, "जा लगा पूरे मैदान में झाड़ू..... नहीं तो गाँड में मिर्ची डालके स्कूल से बाहर काढ़ (निकाल) दूँगा।"

भयभीत होकर मैंने तीन दिन पुरानी वही शीशम की झाड़ू उठा ली। मेरी तरह ही उसके पत्ते सूखकर झड़ने लगे थे। सिर्फ बची थीं पतली-पतली टहनियाँ। मेरी आँखों से आँसू बहने लगे थे। रोते-रोते मैदान में झाड़ू लगाने लगा। स्कूल के कमरों की खिड़की, दरवाजों से मास्टरों और लड़कों की आँखें छिपकर तमाशा देख रही थीं। मेरा रोम-रोम यातना की गहरी खाई में लगातार गिर रहा था।

मेरे पिताजी अचानक स्कूल के पास से गुजरे। मुझे स्कूल के मैदान में झाड़ू लगाता देखकर ठिठक गए। बाहर से ही आवाज देकर बोले, "मुंशी जी, यो क्या कर रा है?" वे प्यार से मुझे मुंशी जी ही कहा करते थे। उन्हें देखकर मैं फफक पड़ा। वे स्कूल के मैदान में मेरे पास आ गए। मुझे रोता देखकर बोले, "मुंशी जी ..... रोता क्यों है? ठीक से बोल, क्या हुआ है?"

मेरी हिचकियाँ बँध गई थीं। हिचक-हिचककर पूरी बात पिताजी को बता दी कि तीन दिन से रोज झाड़ू लगवा रहे हैं। कक्षा में पढ़ने भी नहीं देते।

पिताजी ने मेरे हाथ से झाड़ू छीनकर दूर फेंक दी। उनकी आँखों में आग की गर्मी उतर आई थी। हमेशा दूसरों के सामने कमान बने रहनेवाले पिताजी की लंबी-लंबी घनी मूँछें गुस्से से फड़फड़ाने लगी थीं। चीखने लगे, "कौन-सा मास्टर है वो द्रोणाचार्य की औलाद, जो मेरे लड़के से झाड़ू लगवावे है.....।"

पिताजी की आवाज पूरे स्कूल में गूँज गई थी, जिसे सुनकर हेडमास्टर के साथ सभी मास्टर बाहर आ गए। कलीराम हेडमास्टर ने गाली देकर मेरे पिताजी को धमकाया। लेकिन पिताजी पर धमकी का कोई असर नहीं हुआ। उस रोज जिस साहस और हौसले से पिताजी ने हेडमास्टर का

सामना किया, मैं उसे कभी भूल नहीं पाया। कई तरह की कमजोरियाँ थीं पिताजी में, लेकिन मेरे भविष्य को जो मोड़ उस रोज उन्होंने दिया, उसका प्रभाव मेरी शख्सियत पर पड़ा।

हेडमास्टर ने तेज आवाज में कहा था, "ले जा इसे यहाँ से ..... चूहड़ा होके पढ़ाने चला है ..... जा चला जा .... नहीं तो हाड़-गोड़ तुड़वा दूँगा।"

पिताजी ने मेरा हाथ पकड़ा और लेकर घर की तरफ चल दिए। जाते-जाते हेडमास्टर को सुनाकर बोले, "मास्टर हो.... इसलिए जा रहा हूँ.... पर इतना याद रखिए मास्टर..... यो चूहड़े का यहीं पढ़ेगा.... इसी मदरसे में। और यो ही नहीं, इसके बाद और भी आवंगे पढ़ने कू।"

पिताजी को विश्वास था, गाँव के त्यागी मास्टर कलीराम की इस हरकत पर उसे शर्मिंदा करेंगे। लेकिन हुआ ठीक उल्टा। जिसका दरवाजा खटखटाया, यही उतर मिला, "क्या करोगो स्कूल भेजके! या कौवा बी कभी हंस बण सके। तुम अनपढ़ गँवार लोग क्या जाणो, विद्या ऐसे हासिल ना होती। अरे! चूहड़े के जाकत कू झाड़ू लगाने कू कह दिया तो कोण-सा जुल्म हो गया", या फिर "झाड़ू ही तो लगवाई है, द्रोणाचार्य की तरियों गुरु-दक्षिणा में अँगूठा तो नहीं माँगा," आदि-आदि।

पिताजी थक-हारकर निराश लौट आए, बिना खाए-पिए रात-भर बैठे रहे। पता नहीं किस गहन पीड़ा को भोग रहे थे पिताजी। सुबह होते ही उन्होंने मुझे साथ लिया और प्रधान सगवा सिंह त्यागी की बैठक में पहुँच गए।

पिताजी को देखते ही प्रधान बोले, "अबे, छोटन ..... क्या बात है? तड़के ही तड़के आ लिया।"

"चौधरी साहब, तम तो कहो ते सरकार ने चूहड़े-चमारों के जाकतों (बच्चों) के लिए मदरसों के दरवाजे खोल दिए हैं। और यहाँ तो हेडमास्टर मेरे इस जाकत कू पढ़ाने के बजाए क्लास से बाहर लाके दिन-भर झाड़ू लगवावे है। जिब यो दिन-भर मदरसे में झाड़ू लगावेगा तो इब तम ही बताओ पढ़ेगा कब?" पिताजी प्रधान के सामने गिड़गिड़ा रहे थे। उनकी आँखों में आँसू थे। मैं पास खड़ा पिताजी को देख रहा था।

प्रधान ने मुझे अपने पास बुलाकर पूछा, "कोण-सी किलास में पढ़े है?"

"जी, चौथी में।"

प्रधान जी ने पिताजी से कहा, "फिकर ना कर, कल मदरसे में इसे भेज देणा।"

अगले रोज डरते-डरते मैं स्कूल पहुँचा, डरा-डरा कक्षा में बैठा रहा, हर क्षण लगता था, अब आया हेडमास्टर... अब आया। जरा-सी आहट पर दिल घबराने लगता था। उसके बाद स्थिति सामान्य हो गई थी। लेकिन कलीराम हेडमास्टर को देखते ही मेरी रूह काँप जाती थी। लगता, जैसे सामने से मास्टर नहीं, कोई जंगली सूअर थूथनी उठाए चिंचियाता चला आ रहा है।

गेहूँ की फसल कटने के वक्त मोहल्ले के सभी लोग तगाओं के खेतों में गेहूँ काटने जाते थे। तपती दोपहर में गेहूँ काटना बहुत कष्टप्रद और कठिन होता है। सिर पर बरसती धूप। नीचे तपती जमीन, नंगे पाँवों में कटे पौधों की जड़ें शूल की तरह तलवों में चुभती थीं। उनसे भी ज्यादा चुभन होती थी सरसों और चने की जड़ों से। चना काटने में एक कठिनाई और थी। चने के पत्तों पर खटाई होती है जो काटते समय पूरे शरीर पर चिपक जाती है। नहाने पर भी कम नहीं होती। कटाई करनेवाले अधिकतर चूहड़े या चमार ही होते थे, जिनके तन पर कपड़े सिर्फ नाम-भर के होते थे। पाँव में जूता होने का तो सवाल ही नहीं होता था। नंगे पाँव फसल कटने तक बुरी तरह घायल हो जाते थे।

चर्चा के बिन्दु

(1) एक दलित लेखक की आत्मकथा के अंश पर आपकी क्या प्रतिक्रिया है?

(2) जब आप स्कूल के छात्र थे खुद आपके साथ या किसी दलित छात्र के साथ किसी शिक्षक ने ऐसा व्यवहार किया है? यदि हाँ, तो थोड़ा विस्तार से बताएँ।

(3) क्या हाल के वर्षों में किसी शिक्षक ने किसी दलित छात्र के साथ आपकी नजर में दुर्व्यवहार किया है?

(4) अगर स्कूल में आपके सहकर्मी शिक्षक किसी भी रूप में दलित छात्र के साथ भेद-भाव जैसा व्यवहार करते हैं तो आप किस तरीके से उनसे बातचीत करेंगे?

(5) आप जानते हैं कि दलित और पिछड़ी जाति से आने वाले बच्चों के साथ स्कूल में भेद-भाव बरता जाता है? हालाँकि हाल के वर्षों में भेद-भाव का स्वरूप काफी बदला है और यह भेद-भाव अब सूक्ष्म रूप में ज्यादा प्रकट होता है। भेद-भाव के बदलते स्वरूप की आप क्या वजह मानते हैं? स्कूलों में बच्चों के साथ किए जानेवाले 'सूक्ष्म भेदभाव' को आप कैसे दूर करेंगे?

अध्याय - 4

संस्कार*

हमारे शोध स्कूलों में जब उपेक्षित समुदाय– खास तौर से मुसहर समुदाय के बच्चों की असफलता के बारे में पूछा गया तो शिक्षकों ने कहा कि इन बच्चों और इनके माता-पिता के संस्कार इसके लिए जिम्मेदार हैं। एक सामान्य जवाब था कि ये बच्चे कैसे पढ़ सकते हैं, इनके तो संस्कार ही नहीं हैं। प्राइमरी स्कूल के एक शिक्षक ने कहा:

संस्कार के अभाव के कारण मुसहर समुदाय के बच्चों के माँ-बाप अपने बच्चों को शिक्षित करने की ओर प्रवृत्त नहीं हैं। वे हीनता के व्यापक बोध

*यह पाठ देशकाल द्वारा प्रकाशित शोध रिपोर्ट 'सामाजिक पठानुक्रम और शैक्षिक क्षमता की अवधारणा' से लिया गया है।

से पीड़ित हैं और सोचते हैं कि शिक्षा प्राप्त कर वे क्या करेंगे। वे शिक्षा के महत्त्व को नहीं समझते।

संस्कार इन बच्चों की शिक्षा में कैसे भूमिका अदा करते हैं, इस बात की आगे व्याख्या करने हेतु कहे जाने पर शिक्षकों ने बहुत से संकेतार्थों जैसे – माता-पिता में शिक्षा का अभाव, गरीबी, घर का वातावरण, स्वच्छता का अभाव, आदि का उदाहरण पेश किया। जवाबों को निम्नलिखित उदाहरणों से समझा जा सकता है:

मुसहर समुदाय के बच्चे शिक्षा में सफल होने के योग्य नहीं हैं, क्योंकि उनके माता-पिता अशिक्षित हैं। अगर ये माता-पिता अपने बच्चों को शिक्षा देना भी चाहें तो गरीबी के कारण नहीं दे सकते। इन माता-पिता के संस्कार ऐसे हैं कि वे बच्चों को स्कूल भेजने के बजाय काम पर भेजते हैं। – एक शिक्षिका

संस्कारों के अभाव के कारण, मुसहर समुदाय के बच्चों के माता-पिता अपने बच्चों को शिक्षा देने की चिंता नहीं करते। शिक्षा के अभाव, अस्वच्छ जीवन की आदतों और गरीबी के कारण ये माता-पिता खुद ही शिक्षा के प्रेरक संस्कार नहीं रखते। – एक शिक्षक

मुसहर समुदाय के बच्चों में शिक्षा के अभाव के कारण हैं – संस्कार की कमी, गरीबी और घर का वातावरण। – दूसरा शिक्षक

इस तरह का रुख और विश्वास केवल उन्हीं शिक्षक में नहीं था जो उच्च जाति या समुदाय से आते हैं। एक दलित शिक्षक ने बताया:

अपने संस्कारों के चलते, उपेक्षित समुदाय के माता-पिता अपने बच्चों की शिक्षा में रुचि नहीं लेते हैं। गरीबी के कारण वे सोचते हैं कि अपने बच्चों की शिक्षा की जरूरत नहीं है। उनका संस्कार उनके इस रुख में भी प्रतिबिम्बित होता है। इन माता-पिताओं में शिक्षा का अभाव शुरुआत से ही उनके संस्कार से संबंधित है।

शिक्षकों के जवाबों में जो चीज ध्यान देने योग्य है वह यह कि उपेक्षित समुदायों के बच्चों की शैक्षणिक असफलता के कारणों की व्याख्या करते समय शिक्षकों ने गरीबी, माता-पिताओं की शिक्षा के अभाव और घर के वातावरण जैसे कारणों को स्पष्ट किया। लेकिन बजाय इन

कारणों को असफलता से सीधे-सीधे जोड़ने के, शिक्षकों ने इन कारणों को संस्कार से जोड़ने की कोशिश की। उन्होंने तर्क दिया कि संस्कार ही बच्चों की शैक्षिक असफलता के लिए जिम्मेदार है।

यदि संस्कार का मतलब समाजार्थिक हालातों से सीधे-सीधे जुड़ी हुई सांस्कृतिक या सामाजिक पूंजी से लिया जाए तो शायद यह कम समस्यामूलक होगा। तब यह तर्क दिया जा सकता है कि उपेक्षित समुदायों के पास अपनी गरीबी या निरक्षरता के कारण आवश्यक सांस्कृतिक पूंजी नहीं है जो मौजूदा स्कूली व्यवस्था में उनके बच्चों के सफल होने के लिए जरूरी है। संस्कार की धारणा में विश्वास तब समस्या-मूलक हो जाता है, जब शिक्षक समुदायों के आनुवांशिक या प्राप्त लक्षणों के नजरिए से देखने लगते हैं। एक शिक्षिका के शब्दों में, "संस्कार एक आनुवांशिक व्यवस्था है।" दूसरे शिक्षक ने व्याख्या की, "ये खून में होती है। अतः यह एक जैविक लक्षण है।" किसी में संस्कार कैसे निर्मित होते हैं, इस प्रश्न के जवाब में आनुवांशिक चरित्र में शिक्षक का विश्वास और अधिक स्पष्ट हुआ।

शिक्षकों के जवाबों से उनके विश्वास का स्पष्ट संकेत मिलता है।

एक बच्चे के संस्कार उसकी माँ के गर्भ में बनना शुरू होते हैं। जन्म के बाद माता-पिता के संस्कार, जीवनशैली, उसके समुदाय और समाज के पर्यावरण से उसका निर्माण होता है। – एक शिक्षक

बच्चे अपने माँ-बाप से संस्कार प्राप्त करते हैं। यदि माता-पिता के संस्कार अच्छे हैं तो बच्चे के संस्कार भी अच्छे होंगे। उदाहरणार्थ, यदि माता-पिता शिक्षित हैं तो उनके बच्चों को भी शिक्षा प्राप्त होगी। – दूसरा शिक्षक

कई शिक्षकों का मानना था कि संस्कार माता-पिता से बच्चों में पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ने वाली अभिवृत्तियाँ हैं। यदि माता-पिता के संस्कार अच्छे हैं तो वे बच्चों को भी अच्छे संस्कार देंगे।

उपेक्षित समुदायों से आए हुए कुछ शिक्षकों ने विश्वासपूर्वक शिक्षकों की इस सर्वव्यापी समझ को खारिज कर दिया और तर्क दिया कि इन बच्चों की शैक्षणिक असफलता के लिए शिक्षा देने का तरीका और स्कूल आधारित कारण जिम्मेदार हैं।

एक शिक्षक ने इस दिशा में तीन कारण गिनाए - अरुचिपूर्ण शिक्षण, शिक्षकों में पेशागत कौशल का अभाव और भय पर आधारित शिक्षा-विधियाँ।

दूसरे शिक्षक ने कहा –

मुसहर समुदाय के बच्चों की असफलता के लिए माता-पिता के संस्कार उत्तरदायी नहीं हैं। यह पाया गया है कि संस्कारहीन माता-पिता के बच्चे भी महान विद्वान और विख्यात हुए हैं। गरीबी और उससे जुड़ी हुई अनिवार्यताओं ने इन बच्चों को शिक्षा से दूर रखा है। आज मुसहर समुदाय का हरेक व्यक्ति इस बात के प्रति सचेत है कि उनके बच्चों को शिक्षा की जरूरत है।

शिक्षा और संस्कार के आपसी संबंधों के बारे में कहा जाता है कि इनमें से हरेक एक-दूसरे को पैदा करता है। दूसरे शब्दों में, शिक्षा से संस्कार पैदा होते हैं और इसके उलट संस्कार से शिक्षा आती है। पवित्रता और अपवित्रता की जाति-आधारित धारणा संस्कार की धारणा में निहित है वह शिक्षक द्वारा संस्कार उपेक्षित समुदायों के पारंपरिक पेशों से जोड़ने के प्रयासों से सामने आ जाती है। उदाहरणार्थ, शिक्षकों का बहुमत मानता है कि यद्यपि सूअर पालना दूषित करने वाला और बुरे संस्कारों का संकेत है, मुसहर समुदाय अपने संस्कारों के कारण सूअर पालता है।

जवाबों के कुछ नमूने इस सच्चाई को उजागर करते हैं:

1. मुसहरों के संस्कार ऐसे हैं कि वे सूअर पालने को अच्छा मानते हैं। उनके संस्कार ऐसे हैं कि वे सूअर का मांस खाते हैं। मुसहर खुद बड़े अस्वच्छ हैं। इसलिए वे सूअरों को प्रदूषण फैलाने वाला नहीं मानते।

2. सूअर पालने का जीवन-शैली और चिन्तन पर बुरा असर पड़ता है। उसका बुरा असर संस्कारों पर भी पड़ता है। इसे प्रदूषणकर्ता माना जाकर नीची दृष्टि से देखा जाता है।

अधिकतर शिक्षकों द्वारा मुसहर समुदाय को अस्वच्छ माना जाता है, उनके सूअर पालने के काम को गंदा माना जाता है, और मुसहर समुदाय को एक गंदगी फैलाने वाले काम में लगा हुआ माना जाता है, क्योंकि ये उसके पीढ़ी-दर-पीढ़ी के संस्कार हैं।

संस्कार की धारणा के मूलभूत सिद्धांत भी वही हैं जो पारंपरिक जाति-व्यवस्था के हैं। पा. रंपरिक जाति-व्यवस्था में निचली जातियों को शिक्षा और विद्यार्जन के लिए अयोग्य माना जाता है, क्योंकि ये दोनों एक 'शुद्ध' व्यवसाय माने जाते हैं। इसी तरह आज शिक्षक मानते हैं कि दलित या मुसहर समुदाय के संस्कार विद्यार्जन और शिक्षा के योग्य नहीं हैं।

हालाँकि शिक्षक जाति के कारक पर सीधे-सीधे चर्चा करने के अनिच्छुक हैं। वे इस बात पर जोर देते हैं कि बच्चे की जातिगत पहचान स्कूल में कोई मायने नहीं रखती और हर बच्चे

से समानता का व्यवहार किया जाता है। जोर देकर कहा गया उनका यह कथन इस तथ्य द्वारा झुठला दिया गया है कि बच्चों की नामांकन पंजिका में जानकारी का एक कालम है, जिसमें गाँव के हर बच्चे की जातिगत पहचान दर्ज है। स्कूल के सरकारी रिकॉर्ड उसे खुलेआम दर्शाते हैं और इसे जाहिर करना महत्वपूर्ण मानते हैं।

चर्चा के बिन्दु

(1) आपने जिस शोध रिपोर्ट के अंश का पाठन किया उससे आप किस हद तक सहमत या असहमत हैं और क्यों?

(2) संस्कार और शिक्षा के संबंध पर आपकी राय क्या है?

(3) संस्कार की धारणा बच्चों के सीखने और सिखाने की प्रक्रिया को कैसे बाधित करती है?

(4) उपेक्षित समुदाय के बच्चों की शैक्षणिक सफलता कैसे बढ़ायी जा सकती है?

अध्याय – 5

रामदेव मांझी का लड़का

अभी रात काफी नहीं हुई है। रामदेव मांझी गाल पर हाथ रखकर आंगन में बैठा है। हाथ में हुक्का है, पर चिलम खाली है। उसका मिजाज ठीक नहीं है, क्योंकि बाजार से तम्बाकू नहीं आया है। चावल खरीदने के बाद हाथ में और पैसा नहीं था। घर में छोटी लड़की बीमार है। कुछ दिन से बुखार है। कुछ समय पहले रामदेव मांझी ने बेटी का सिर छू कर बुखार देखा था। सारा शरीर जैसे आग से जल रहा है। बड़े डॉक्टर के पास जाने के लिए पत्नी ने सुझाया है। रामदेव मांझी कुछ बोला नहीं, क्योंकि हाथ में पैसा नहीं है और फुर्सत भी नहीं है। अभी रात को उसे उमेश सिंह के घर पर जाना पड़ेगा। उमेश सिंह का बड़ा लड़का दिल्ली में पढ़ता है। वह विश्वविद्यालय का विद्यार्थी है। आज रात में ट्रेन से दिल्ली लौटेगा। रामदेव मांझी उसके लड़के का सामान लेकर स्टेशन जाएगा।

रामदेव मांझी की पत्नी घर के भीतर से उसको बहुत कुछ बोली। वह झुझलाते हुए बोली, "लड़की बीमार है। डॉक्टर के घर पर जाने का समय नहीं, लेकिन महाजन उमेश सिंह के पास

जाने के लिए तुम्हारे पास फुर्सत रहती है।" रामदेव मांझी पत्नी की बात का कुछ जवाब नहीं दे सका। उसके हाथ पैसा नहीं है। वह चुपचाप उमेश सिंह के घर की तरफ चलने लगा। सारा दिन रामदेव मांझी ने घर में काम किया है। खूब सबेरे तालाब में मछली पकड़ा है– बड़ा-बड़ा रेहु, कतला। इन सबका जीरा रामदेव मांझी ने तालाब में स्वयं छोड़ा था। महाजन का लड़का छुट्टी पूरी होने पर दिल्ली जाएगा, इसलिए मछलियाँ पकड़ी गयी हैं। उमेश सिंह ने थोड़ी मछली रामदेव मांझी को भी दिया था। रामदेव मांझी की अपनी जमीन नहीं है। वह आजकल महाजन उमेश सिंह की बटाई खेती करता है। खेत में रामदेव मांझी खूब मेहनत करता है, लेकिन जो फसल होती है उसका अधिकतर भाग महाजन उमेश सिंह ले जाता है। रामदेव मांझी के हिस्से में बहुत कम आता है। इससे रामदेव मांझी का सालभर भोजन नहीं चल पाता है। वह शेष दिन महाजन के घर में अनेक प्रकार के काम करता है। धान की कोठी पुरानी हो चुकी है। रामदेव मांझी ने चार-पाँच दिन मेहनत कर नई कोठी तैयार की है। महाजन का लड़का दिल्ली जाएगा। रुपये की जरूरत है। बिक्री के लिए धान बाजार में रामदेव मांझी ले गया था। महाजन ने इस सब काम के लिए रामदेव मांझी को कुछ पैसा दिया है, लेकिन इससे उसका घर-परिवार नहीं चलता है।

आज महाजन का बड़ा लड़का पढ़ने के लिए बाहर जाएगा। रामदेव मांझी उसका समान लेकर स्टेशन जाएगा। रामदेव मांझी का बड़ा लड़का एक साल पहले स्कूल में पढ़ता था। फिलहाल वह अपने लड़के को स्कूल नहीं भेज पा रहा है।

कहानी को सहभागियों के बीच पढ़कर सुनाने के बाद उनकी राय सुनिए। उसके बाद निम्नलिखित सवाल कीजिए –

(1) रामदेव मांझी की हालत कैसी है? वह कौन-सा काम करता है?

(2) महाजन के खेत में कौन मेहनत करता है और फसल कौन उगाता है?

(3) जमीन की फसल रामदेव मांझी के हिस्से में ज्यादा जाती है या महाजन के हिस्से में?

(4) महाजन के तालाब में किसने मछली छोड़ी थी? बड़ी-बड़ी मछली कौन खाएगा?

(5) धान की बिक्री के रुपये से महाजन का लड़का दिल्ली में पढ़ सकता है, परंतु रामदेव मांझी का लड़का लिखाई-पढ़ाई नहीं कर पा रहा है, क्यों?

अध्याय - 6

बाल मजदूरी

तेरह साल का उमेश अपने पांच भाई-बहनों में मझला है। चार साल पहले उमेश का परिवार जलालपुर गाँव से आया है। पुनपुन नदी का बाँध टूटने से उमेश का घर बह गया था। उमेश के पिताजी की जमीन के साथ घर-द्वार भी चला गया। कोई उपाय नहीं रहने से परिवार के सब लोगों के साथ वह जलालपुर में जा बसा। उस दिन से उमेश यमुना सिंह के घर काम करने लगा।

उमेश के हर रोज के काम की कोई सीमा नहीं है। वह सवेरे मैदान में गाय-गोरू चराने ले जाता है और शाम में वापस आता है। फिर उसे मालिक के दुनिया-भर की फरमाइशों को पूरा करना पड़ता है। थोड़ी भी फुर्सत नहीं मिलती। काफी रात में उमेश घर लौटता है। तब तक उसके छोटे-छोटे भाई-बहन सो जाते हैं। उनके जगने के पहले उमेश फिर यमुना सिंह के घर चला जाता है। उसको किसी के साथ खेलने-घूमने का समय नहीं मिलता। सारा दिन वह काम करता है, फिर भी उसे मालिक की डाँट-फटकार सुननी पड़ती है।

उमेश को शुरू में काम करने पर मजदूरी नहीं मिलती थी। उसे सिर्फ पेट-भर भोजन पर काम करना पड़ता था। उसके बाद धीरे-धीरे कुछ मजदूरी मिलने लगी। परंतु जितना काम करता है, उसकी उचित मजदूरी उसे नहीं मिलती।

यमुना सिंह के घर में काम करने के समय उमेश को बहुत जुल्म सहन करना पड़ता है। किसी कारणवश काम में देरी होने पर उसकी पिटाई तक होती है। उमेश देखता है कि यमुना सिंह के बच्चे किताब-कॉपी लेकर स्कूल जाते हैं, लेकिन उसी उम्र में उसको मालिक के घर काम करना पड़ रहा है। उसे मार भी खानी पड़ती है। किन्तु उमेश लम्बी साँस लेकर सोचता है कि एक दिन जरूर उसके जीवन में सुख-संतोष आयेगा।

ऊपर लिखित कहानी को सुनाने के बाद सहभागियों से निम्नलिखित प्रश्न कीजिए–

(1) उमेश को यमुना सिंह के घर में काम क्यों करना पड़ता है?

(2) सवेरे से रात तक काम करने के बावजूद क्या उमेश उचित मजदूरी पाता है?

(3) हमारे देश में उमेश जैसे उम्र के लड़के-लड़कियों के ऊपर किस प्रकार का शोषण-अत्याचार होता है?

(4) शिक्षा के अधिकार के संदर्भ में उमेश जैसे बच्चे को स्कूल में दाखिला कैसे दिलाया जा सकता है?

(5) उमेश जैसे बच्चे जो स्कूल में दाखिल हैं, शिक्षा की समुचित व्यवस्था कैसे हासिल कर सकते हैं?

अध्याय – 7

कृषक समुदाय और शिक्षा

देश में 70 प्रतिशत लोग कृषि पर निर्भर करते हैं। कृषि छोड़कर जिन्दा रहने का कोई उपाय नहीं है उनके पास। लेकिन किसानों और मजदूरों को कोई प्रतिष्ठा नहीं देता है। समझा जाता है कि जो लोग खेत में काम करते हैं उनकी योग्यता कम होती है। इसलिए शहर के लोग एवं गाँव के शिक्षित लोग मजदूरों को हीन दृष्टि से देखते हैं।

किसानों को फसल का सही दाम नहीं मिलता है। धान, गेहूँ का दाम बहुत कम है, परंतु इनको उपजाने के लिए लागत खर्च बहुत ज्यादा है। खाद और कीटनाशक दवा खरीदना उनकी औकात से बाहर है। सिंचाई की उचित व्यवस्था नहीं है। किसान बैंक से कर्जा लेता है। महाजन से कर्जा लेकर फसल उगाने से उसे कोई लाभ नहीं होता है। कर्जे का सूद भी बहुत है और

उसके साथ-साथ बाढ़, सुखाड़, पत्थर पानी की समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है। इन सब कारणों से खेती लाभप्रद नहीं है। कृषि लाभप्रद नहीं होने से कृषक को कोई प्रतिष्ठा नहीं मिलती है। कृषक को अच्छी तरह से भोजन भी नहीं मिल पाता है। वह अच्छे ढंग से रह भी नहीं सकता। इस स्थिति में किसान-मजदूर अपने बच्चों को समुचित शिक्षा की व्यवस्था नहीं कर पाते हैं। इसका नतीजा यह है कि इनके बच्चों की शिक्षा का स्तर काफी निम्न है।

चर्चा के बिन्दु

(1) मजदूर-कृषक को प्रतिष्ठा कैसे मिल सकती है?

(2) कृषि के विकास का मतलब भारतवर्ष का विकास क्यों?

(3) खेतिहर मजदूर को क्या उचित मजदूरी मिलती है?

(4) अधिकतर खेती वर्षा पर आधारित है या सिंचाई की व्यवस्था है?

(5) कृषक-मजदूर अनाज, साग-सब्जी वगैरह उगाते हैं, किन्तु उसका मूल्य-निर्धारण कौन करता है? वे किस मौसम में क्या-क्या सब्जी उगाते हैं?

(6) जहाँ सिंचाई की व्यवस्था नहीं है वहाँ किसान-मजदूर गर्मी के महीनों में किस प्रकार अपना समय बिताते हैं?

(7) किसान और मजदूर खेती के काम के अलावा और किन उपायों से परिवार की आमदनी बढ़ा सकते हैं?

(8) किसान मजदूर का गुजारा खेती से क्यों नहीं हो पाता है?

(9) किसान-मजदूर के बच्चों के लिए अच्छी शिक्षा की व्यवस्था कैसे हो सकती है?

अध्याय - 8

लोक ज्ञान

सामान्यतः स्कूली पाठ्यपुस्तकें 'स्थानीय ज्ञान' को छोड़ देती हैं। इनमें साधारण आदमी के दैनिक काम-काज से प्राप्त अनुभवों को जगह नहीं मिलती है। दरअसल इन्हें इस योग्य माना ही नहीं जाता कि ये पाठ्य पुस्तकों का हिस्सा बनने लायक हैं। इन पुस्तकों में समाज के विशिष्ट लोगों और उच्च वर्गों के अनुभवों को ही सबके अनुभव के रूप में दर्ज करने की परंपरा है। इस तरह राष्ट्रनिर्माण के अति-उत्साही देश-काल में 'सामाजिक वर्चस्व' का 'सामाजिक सार्वभौम' के रूप में चित्रण बड़ा ही सामान्य प्रतीत होता है। भारतीय समाज में जाति के नियम आज भी दिन-प्रतिदिन के सामाजिक-सांस्कृतिक परिक्षेत्र का नियमन करते हैं। जो कोई भी स्थापित मानकों (जो यथास्थितिवाद का ही दूसरा नाम है) से अलग कुछ भी सोचे या करे, उसे अपमान का ही शिकार होना पड़ता है।

कभी-कभार लोक-संगीत और लोक-कथाओं में स्थापित परंपरा के विपरीत कुछ बातें देखी जा सकती हैं। कुछ मामलों में वे रूढ़ियों को तोड़ने के उदाहरण हैं। वे सभी प्रतिकूलताओं के विरुद्ध मानवीय अस्तित्व के दृष्टांत हैं। ये लोगों की जिंदादिली के बिनलिखे दस्तावेज की तरह हैं। वे अतीत में वर्चस्वशाली धाराओं के विरुद्ध सामान्य-जन के प्रतिरोध के विवरण हैं। इनकी फिर से खोज तथा प्रकाशन उन सभी लोगों के सशक्तीकरण जैसा होगा, जिन्होंने ऐतिहासिक रूप से दर्द में गीत गाने की कला सीखी होगी।

शिक्षकों से ऐसे गीतों, कथाओं, मिथकों तथा वीरगीतों को संकलित करने तथा उनका दस्तावेज तैयार करने को कहें। इस बारे में शिक्षक अपने विद्यार्थियों के माता-पिता से भी बातचीत कर सकते हैं। यह प्रक्रिया विद्यालय तथा समुदाय के बीच जुड़ाव को मजबूत करेगी। कुछ नयापन लाने के लिए आप ऐसी संकलित सामग्री में निम्नांकित को शामिल कर सकते हैं:

- नाटिकाओं के रूप में लेखन।
- सांस्कृतिक उत्सव।
- निबंध-लेखन प्रतियोगिताएँ।
- कथा-वाचन प्रतियोगिताएँ।
- विशिष्ट दिवसों/ अवसरों/ व्यक्तियों पर आधारित समारोह।

यह अभ्यास पाठ्यपुस्तकों में अतीत के एकांगी चित्रण के विपरीत इसकी सच्ची विविधता के बारे में शिक्षकों को अवगत कराएगा।

जैसा कि आप सोच सकते हैं, बहुत सारे लोक-गीत तथा लोक-कथाएँ जाति-आधारित अनुभव के बारे में होंगी। इनके संकलन तथा विश्लेषण एवं पुनर्प्रस्तुति में अत्यंत सावधानी की आवश्यकता होगी। जाति-आधारित यथार्थ को रेखांकित करने का मूल उद्देश्य ऐतिहासिक तथा वर्तमानकालिक जख्मों को भरना होगा, न कि संघर्ष को बढ़ाना। यह तभी संभव है, यदि हम जाति-आधारित शोषण को कम कर सकें तथा किसी परंपरा से जुड़ी ऐतिहासिक विकृतियों को ठीक कर सकें।

पहले कहे गए अभ्यास को जारी रखते हुए हम अपनी कार्यसूची में उन चरित्रों तथा व्यक्तित्वों के बारे में सूचनाएँ एकत्र करते हैं, जो अतीत में जाति-व्यवस्था के खिलाफ अपने प्रतिरोध के लिए जाने जाते हैं। उनका लेखन हमारी दीवारों पर सुसज्जित होना चाहिए।

हम महात्मा बुद्ध तथा कबीर का उदाहरण ले सकते हैं। ये दोनों व्यक्तित्व आजीवन जाति-व्यवस्था के विरुद्ध अपना संघर्ष जारी रखने के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। प्राय:

अनमने और कर्मकांडीय रूप से हमारी पाठ्य-पुस्तकें अवश्य इनका उल्लेख कर देती हैं। एक अध्याय में राजकुमार सिद्धार्थ द्वारा अपने भाई के बाण से घायल किए गए एक कबूतर को बचाए जाने की कथा बताई जाती है। किंतु लेखक यह उल्लेख भी नहीं करता कि यही सिद्धार्थ आगे चलकर बुद्ध बने।

इसके आगे यह सोचना तो ख्याली पुलाव ही होगा कि उसमें बौद्ध-दर्शन तथा जाति-प्रथा के विरुद्ध बौद्धमत का तीव्र विरोध जैसी चीजों का उल्लेख होगा। उसी तरह कबीर के एकाध दोहे इधर-उधर बिखरे हुए रूप में तो मिल जाएँगे, पर उनको वैसे दोहे तथा साखियाँ शायद ही मिलें जो उन्हें जाति-प्रथा के विरुद्ध इतना सशक्त व्यक्तित्व सिद्ध करती हैं। उनके दोहे आसानी से समझे जा सकते हैं तथा उनको गाया भी जा सकता है। फिर भी ऐसा कोई विद्यालय नहीं है, जिसकी प्रार्थना में कबीर के दोहे या पद शामिल हों।

अभ्यास

- जाति-प्रथा के विरुद्ध बुद्ध के उपदेशों का संकलन।
- बुद्ध के जीवन-वृत्त पर आधारित कथाओं का संकलन।
- जाति-प्रथा के विरुद्ध कबीर के पदों का संकलन।
- विद्यालय की दीवारों पर कबीर के कुछ दोहों का लेखन।
- कबीर के पदों का गायन तथा इन पदों पर आधारित गायन-प्रतियोगिता।
- विद्यालय की प्रार्थना में कबीर के जाति-विरोधी पदों का समावेशन।
- कुछ ऐसे ही अन्य व्यक्तियों का संक्षिप्त परिचय (जैसे - नानक, दादू तथा अन्य संत व सूफी कवि)।

अध्याय - 9

विद्यालय से समुदाय और समुदाय से विद्यालय

बहुत-से लोग सोचते हैं कि विद्यालय एक पंथनिरपेक्ष स्थान है। बहुत-से ऐसे लोग हैं जो मानते हैं कि ऐसा होना चाहिए, लेकिन वर्तमान में ऐसा है नहीं। ऐसे लोगों की भी संख्या कम नहीं है जो यह मानते हैं कि समाज में जो कुछ भी होता है, विद्यालय को उससे प्रभावित नहीं होना चाहिए। कुछ ऐसे लोग भी हैं जो मानते हैं कि विद्यालय को समाज से अलग नहीं किया जाना चाहिए, नहीं किया जा सकता।

शिक्षक समुदाय के बहुत-से लोग चाहेंगे कि विद्यालय को अलग ही छोड़ दिया जाए, समाज में चलनेवाली बहसें, विवाद, चिंताएँ, मुद्दे विद्यालय के दरवाजे से बाहर ही रहें। ऐसा इसलिए है, क्योंकि शिक्षक यह नहीं चाहते कि विद्यार्थी पाठ्यक्रम से बाहर, पुस्तकीय पाठ से बाहर के मुद्दों में शामिल हों। हो सकता है कि शिक्षक विवाद की संभावनावाले सामाजिक मुद्दों से जुड़ने में असुरक्षित महसूस करते हों। यह भी हो सकता है कि शिक्षक पाठ्यक्रम के बाहर के मुद्दों

को उठाने में अतिरिक्त समय या प्रयास न लगाना चाहते हों, क्योंकि वे हमेशा निर्धारित समय से अधिक समय विद्यार्थियों के लिए नहीं देना चाहते। यह भी हो सकता है कि उन मुद्दों में स्वयं शिक्षक के ऐसे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक हित जुड़े हों, जिन्हें वे सुलझाना न चाहें, अथवा वे कोई स्पष्ट मत प्रकट करने से बचना चाहते हों।

यह वास्तव में बहुत गंभीर तथा डरावना प्रतीत होता है, लेकिन सामान्यत: ऐसा है नहीं। ऐसा शायद ही कभी होता है कि विद्यालय अथवा शिक्षक समुदाय द्वारा बच्चों को पढ़ाने के लिए यह दबाव डाला जाता हो कि जब तक उनके द्वारा किसी मत की स्वीकृति न दे दी जाए, तब तक वे उससे भिन्न कोई मत न रखें। यह तो ज्ञान की शक्ति है, जिसे एक शिक्षक अच्छी तरह जानता है, जो अंतत: निर्धारित करती है कि उसे बच्चों को पढ़ाने-समझाने का कौन-सा रास्ता अपनाना है। किसी कक्षा का वातावरण युद्ध का मैदान नहीं है। फिर भी एक चतुर शिक्षक या कक्षा-अध्यापक विद्यार्थियों को भविष्य के सामाजिक-राजनीतिक क्षेत्र के 'संघर्षों' के लिए तैयार कर सकता है।

विद्यालय तथा समुदाय के बीच के अंतराल को इसी संदर्भ में मोटे तौर पर समझा जा सकता है। हमारा यह मानना नहीं है कि लोग हमेशा किसी न किसी षड्यंत्र के तहत ही कार्य करते हैं। लेकिन हम यह अवश्य कहना चाहते हैं कि हमारा उपचेतन अथवा हमारा 'न जानना' सामान्यत: ऐतिहासिक-सांस्कृतिक परंपराओं से प्रभावित होता है। हम अपने आचरण के पीछे के प्रत्येक कारण को नहीं जान सकते। इसका मतलब यह नहीं कि हमारे आचरण के पीछे कोई कारण नहीं है।

इन सब बातों का विद्यालय जानेवाले एक दस वर्षीय बच्चे के लिए क्या अर्थ है? यह बहुत कुछ इस पर निर्भर करेगा कि हम कैसे उत्तर देना चाहते हैं? जब समुदाय या कोई समाज, विद्यालयीय शिक्षण से बाहर रखा जाता है, तब हम प्राय: अस्पष्ट निष्कर्षों को यूँ ही अपना लेते हैं। एक प्राय: दुहराया जानेवाला उदाहरण यह है कि विद्यार्थियों को सामाजिक सौहार्द, राष्ट्रीय एकता, अथवा अनेकता में एकता समझने के लिए कहा जाता है, बिना उन्हें यह अवसर दिए कि वे सांप्रदायिकता तथा जातिवाद पर चर्चा करें और एकता के एक-एक सूत्र को खोलकर उसकी प्रत्येक स्तर की विविधता को समझें जिसे वे प्रतिदिन अपने आस-पास देखते हैं। अगर हम इसी पद्धति को जारी रखेंगे तो विद्यार्थियों को लगेगा कि हम जो कक्षा में सीखते हैं, उसकी कोई सामाजिक उपयोगिता नहीं है। अथवा जो कुछ वे कक्षा में नहीं सीख सके, वे उसे बिना सीखे ही समाज से ग्रहण कर लेंगे। दोनों ही तरह से अंतत: शिक्षा को ही क्षति पहुँचती है।

इस समस्यापूर्ण विषय को समझने का दूसरा तरीका यह हो सकता है कि हम जानें कि 'ज्ञान' के अंतर्गत कौन-सी चीजें शामिल कर ली गई हैं। हमें प्राय: इसकी अत्यंत सीमित

समझ होती है कि क्या सीखा और पढ़ाया जाना चाहिए तथा क्या नहीं। 'किताबी ज्ञान' नामक मुहावरा इस तथ्य की स्वीकृति है कि कुछ खास तरह के ज्ञान सामाजिक रूप से प्रासंगिक नहीं होते। ज्ञान की परिभाषा में सामान्यत: एक अलिखित आभिजात्य अंतर्निहित होता है, जो प्राय: अपने मूल में जातिवादी होता है; और इस तरह हम सोचना शुरू कर देते हैं कि समाज में बिखरा ज्ञान, लोगों द्वारा व्यवहार में लाया जाने वाला ज्ञान हीनतर है। यह किसी काम का नहीं है। फलत: हमारी शिक्षा-व्यवस्था तथा पाठ्यपुस्तकों में लोक-कथाएं, लोक-गीत, परी-कथाएं, युद्धगीत, लोक-कहावतें तथा मुहावरे आदि लगभग न के बराबर हैं। ज्ञान का वह भाग जो ऐतिहासिक-परंपरागत रूप से लिखित शब्दों के साथ जोड़ा नहीं गया है अथवा जिसको लिखा नहीं गया है, वह भुला दिया गया है, उसकी उपेक्षा की गई है।

ऐसी मानसिकता के पीछे उच्चजातीय मनोवृत्ति काम कर रही होती है। हम जानते हैं कि लिखित शब्द तथा पाठ सामाजिक अभिजात वर्ग के ही विशेषाधिकार रहे हैं। दरअसल जिन मूल्यों का वे पोषण करते हैं, वे पीछे ले जानेवाले होती हैं तथा बड़ी आबादी का शोषण करनेवाले भी होते हैं।

दूसरी तरफ आम जन के अलिखित शब्द और पाठ प्रत्येक प्रतिकूलताओं के विरुद्ध उनकी जिजीविषा तथा रचनात्मक क्षमता के, उनकी संघर्ष-क्षमता के तथा उनकी प्रतिरोध-चेतना के दस्तावेज हो सकते हैं। अब हम किस तरीके से 'समुदाय को विद्यालय तक' तथा 'विद्यालय को समुदाय' तक ला सकते हैं, इस संदर्भ में कुछ अभ्यासों पर नजर डालें जो हमें उस दिशा में आगे बढ़ने में मदद कर सकेंगे।

अभ्यास-1

आगे बढ़ें, मिसाल कायम करें

हम सभी अपने बचपन की उन घटनाओं को याद कर सकते हैं जो हमेशा के लिए हमारे साथ रह जाती हैं। परिवार और मित्र, विद्यालय और शिक्षक हमारे मस्तिष्क पर एक अमिट छाप छोड़ जाते हैं। उनमें से कुछ औरों की तुलना में और भी गहरी छाप छोड़ जाते हैं। ये प्रभाव सुखद अथवा दुखद, प्रेरक अथवा कमजोर करनेवाले, सुंदर अथवा अरुचिकर हो सकते हैं। लेकिन वे होते हैं तथा आजीवन एक मौन तथा रहस्यमय तरीके से हमारे जीवन को प्रभावित करते हैं। हम शायद ही उनके बारे में सोचते हैं, उनका विश्लेषण तो दूर की बात है। आइए, हम उन क्षणों को दोबारा याद करें।

आपके बचपन की वे कौन-सी यादें हैं, जिन्हें आप अभी भी याद करते हैं, जिन्हें आप कभी भूल नहीं पाते? आप अपने मुहल्ले, अपने विद्यालय, दोस्तों, शिक्षकों आदि की सामाजिक संरचना के बारे में क्या-क्या याद करते हैं? क्या आपकी यादें मिलीजुली हैं, कुछ बुरी, कुछ अच्छी? अगर उन क्षणों को एक बार फिर से जीने का मौका आपको मिले तो उसमें क्या नया करना चाहेंगे और क्यों? ऐसी बहुत-सी बातें हो सकती हैं, जिन्हें आप अपने साथ लेकर चलते होंगे। अपने समाज को बेहतर तरीके से समझने के लिए हम अपना फोकस कुछ खास चीजों पर केंद्रित करते हैं:

आपका पृष्ठ

1. वैसी एक घटना बताएँ जब आपको अपनी जाति के कारण गर्व का अनुभव हुआ हो।

---

2. वैसी एक घटना बताएँ, जब आपको अपनी जाति के कारण अपमानित होना पड़ा हो।

---

3. अपने विद्यालय में अनुभव किए अथवा देखे किसी एक जाति-आधारित व्यवहार का जिक्र करें, जिसे आज आप स्वीकार नहीं करना चाहेंगे।

---

4. किसी एक ऐसी जाति-आधारित अन्याय की घटना के बारे में बताएँ, जिसमें आपने सोचा कि आपको हस्तक्षेप करना चाहिए था, पर कर नहीं सके।

---

5. एक ऐसी घटना का जिक्र करें, जिसमें आपके शिक्षक ने किसी जाति-आधारित अन्याय अथवा दुर्व्यवहार को रोकने या सुधारने के लिए कुछ महत्वपूर्ण कार्य किया हो।

- आपने ऐसे प्रश्नों को कितने लोगों से पूछा है तथा उन पर बातचीत की है?
- क्या आपको कुछ करना चाहिए था?
- क्या ऐसी घटनाओं तथा अनुभवों को याद करने से कुछ मदद मिलेगी ?
- यदि हाँ, तो कैसे?

क्या आप एक शिक्षक के रूप में अपने विद्यार्थियों पर ऐसी अमिट छाप नहीं छोड़ना चाहेंगे जो उन्हें जाति-व्यवस्था की बुराइयों का विरोध करने के लिए प्रेरित करे? एक शिक्षक के नाते आप अपने सहकर्मियों को ऐसा ही करने की सलाह नहीं देंगे? बच्चे अपने शिक्षकों का अनुसरण करते हैं। एक बड़े होते बच्चे के ऊपर जो प्रभाव एक शिक्षक का पड़ता है, वैसा किसी का नहीं। ज्ञान हमें आनंदित करता है और यही कारण है कि शिक्षक बच्चों के लिए आदर्श होता है।

अभ्यास - 2

बदलाव लाने की हिम्मत

पृथ्वी चपटी अथवा वर्गाकार ही रह गई होती तथा सूर्य आज भी पृथ्वी का चक्कर लगा रहा होता, यदि कुछ 'अजीब' किस्म के लोगों ने लीक से हटकर चिंतन और प्रयोग न किया होता। उसी तरह से सामाजिक क्षेत्र में भी सतीप्रथा, बाल-विवाह, अस्पृश्यता जैसी कुप्रथाएँ आज भी 'सभ्यता' का प्रतीक मानी जा रही होतीं, यदि कुछ लोगों ने भिन्न तरीके से सोचा न होता और तथाकथित ऐतिहासिक मानकों को चुनौती न दी होती। प्रगति सोचने की स्वतंत्रता की संतान है। विकास को आगे बढ़ाना कभी संभव न हो पाता यदि मनुष्य सिर्फ अनुसरणकर्त्ता होता। अत: एक शिक्षक के रूप में जब कभी आप शिक्षा के बारे में सोचें तो यीट्स ने जो कहा है, उसे स्मरण रखें-

"हम अपने प्रत्येक विद्यार्थी के भीतर कैसे उसी अग्नि को प्रज्वलित कर सकते हैं, जो हमारे समाज की प्रगति के लिए आवश्यक है? निश्चित तौर पर उनके भीतर की जिज्ञासा व रचनात्मकता को खत्म करके कदापि नहीं। और जब समाज को ही पुनर्गठित तथा पुनर्रचित करने का कार्य किया जाना है, तब हमारा प्रयास और भी अधिक व्यवस्थित, नियमित तथा उद्देश्य केंद्रित होना चाहिए।"

जाति-प्रथा के विरुद्ध लड़ाई बहुत लंबी है। हमें अपने प्रयासों में धैर्यवान तथा रचनात्मक होने की आवश्यकता है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया, हम अपनी जाति-आधारित सामाजिक संरचना के पुनर्गठन की जिम्मेदारी लेने में प्राय: अपने को आत्मविश्वासहीन महसूस करते हैं। इसके बहुत सारे कारण हो सकते हैं। आप स्वयं पता करें कि आपके लिए कौन-से कारण लागू होते हैं:

- जाति-व्यवस्था / यथास्थितिवाद का बने रहना आपके लिए प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से लाभदायक है।
- इस कार्य की विशिष्टता आपको सक्रिय रूप से कुछ भी करने से हतोत्साहित करती है।
- आप जाति-व्यवस्था की बुराइयों को आलोचनात्मक रूप से समझने में तथा उस पर प्रश्न उठाने में अपने को असमर्थ पाते हैं।
- अपने सहयोगियों / मित्रों के मजाक का पात्र बनने अथवा उनके द्वारा असहयोग या विरोध किए जाने के डर की संभावना। आपके आस-पड़ोस का सामाजिक परिवेश आपको ऐसे कदम उठाने से हतोत्साहित करता है।

- आप अपने-आप से कहते हैं – 'समय कहाँ है,' 'एक शिक्षक का कार्य-भार बहुत अधिक है,' 'जब पूरा समाज जातिवाद को मानता है तो एक अकेला क्या कर सकता है!'
- 'मैं एक शिक्षक हूँ और मेरा काम है जो कुछ भी पाठ्य-पुस्तक में लिखित है, उसे पढ़ाना,' 'जाति-प्रथा दूर करना राजनेताओं का काम है,' 'हजारों वर्षों से चली आ रही सामाजिक प्रथा में हस्तक्षेप क्यों करूँ ?'
- 'जाति एक ईश्वर की दी हुई जीवन-प्रणाली है।'

आश्चर्यचकित न हों, क्योंकि हममें से अधिकांश लोग ऊपर बताए गए कारणों में यकीन करते हैं। यही वह तथ्य है, जो जाति-व्यवस्था के इतने लंबे समय तक बने रहने के कारण की व्याख्या करता है। हमारा छोटा-सा हस्तक्षेप उतना बड़ा परिवर्तन ला सकता है, जिसका हमें खुद पता नहीं।

आइए, अब हम उन गतिविधियों पर दृष्टिपात करें, जिनके माध्यम से हम हाशिया के लोगों को केंद्र में ला सकने तथा बहिष्कृत को शामिल करने की प्रक्रिया शुरू कर सकते हैं।

2.1 विद्यालय की प्रार्थना

- विद्यालय की प्रार्थना की विषय-वस्तु का परीक्षण करें। क्या वह जातीय मानकों के अनुरूप है?
- मंच से प्रार्थना कौन करवाता है? उन विद्यार्थियों की जाति क्या है?
- क्या कभी दलित विद्यार्थी मंच से प्रार्थना कराते हैं?
- क्या कभी आपने ध्यान दिया है कि जब कभी दलित विद्यार्थियों ने प्रार्थना करवाने की कोशिश की है तो उच्च जाति के विद्यार्थियों ने उसका विरोध किया हो?
- क्या आपको ऐसा लगा है कि दलित विद्यार्थियों के प्रार्थना करवाने से आप कमजोर पड़ जाएँगे?
- क्या आपने कभी दलित विद्यार्थियों को प्रार्थना शुरू करने के लिए प्रोत्साहित किया है?
- क्या आप अपने विद्यालय/कक्षा में अच्छा गानेवाले सभी विद्यार्थियों को जानते हैं?
- कितने दलित विद्यार्थी अच्छा गाते हैं?

2.2 विद्यालय में सांस्कृतिक कार्यक्रम तथा उत्सव

ऊपर के खण्ड में पूछे गए अधिकांश प्रश्नों को यहाँ भी लागू किया जा सकता है। एक बार पुन: आप देखें कि आप क्या कर सकते हैं:

- क्या आप अपने विद्यालय में सांस्कृतिक कार्यक्रम तथा उत्सव आयोजन के लिए विद्यार्थियों की समिति गठित करते हैं? ऐसी समितियाँ कैसे गठित की जाती हैं? विद्यार्थी एक-दूसरे को जिम्मेवारी बाँटने में क्या भूमिका निभाते हैं?
- क्या आप इन समितियों में किसी दलित विद्यार्थी को देखते हैं?
- क्या आप इनमें दलित विद्यार्थियों को मुख्य भूमिका निभाते देखते हैं?
- क्या आप जब कभी किसी उत्सव का आयोजन करते हैं तो उसमें दलित विद्यार्थियों को सक्रिय भागीदारी हेतु प्रोत्साहित करते हैं?

2.3 कक्षा के भीतर

हमें यह मानना चाहिए कि हममें से अधिकांश लोग जातिवादी हैं, इसलिए नहीं कि हम खुद जातीय उत्पीड़न में भाग लेते हैं, बल्कि इसलिए कि जातीय उत्पीड़न को बगैर चुनौती दिए उसे बने रहने देकर हम उसके प्रति उदासीन बने रहते हैं। यदि निम्नलिखित प्रश्न आपको बेतुके लगते हैं तो आपको ज्ञात होना चाहिए कि आप जाने या अनजाने जाति-आधारित पूर्वाग्रहों के मुजरिम हैं:

- आपके पूरे शिक्षण-काल में कितने दलित विद्यार्थी क्लास मॉनिटर रहे हैं?
- आपके पूरे शिक्षण-काल में आप कितने ऐसे दलित विद्यार्थियों को जानते हैं जो पढ़ने, गाने, खेल, चर्चा, पेंटिंग आदि में अच्छे विद्यार्थी रहे हों?
- क्या आपको याद है कि कभी किसी उच्च जाति के शिक्षक ने किसी दलित विद्यार्थी से पीने के लिए पानी मँगवाया हो?
- क्या आपको याद है कि कभी आपने या आपके किसी सहयोगी ने किसी उच्च जाति के विद्यार्थी से कक्षा की सफाई करने के लिए कहा हो?
- क्या आप सबसे आगे की पंक्ति में बैठनेवाले सभी विद्यार्थियों के नाम बता सकते हैं? और, उनके भी जो सामने से पीछे की पंक्ति में बैठते हैं? क्या आप इस सामान्यत: स्वाभाविक प्रतीत होनेवाली घटना में कोई जातीय भेदभाव देखते हैं?

- जब कभी कक्षा में आप कोई सवाल पूछते हैं तो सामान्यत: आप किस ओर देखते हैं? क्या आपने कभी इस ओर ध्यान दिया है?
- आप अपनी भाषा के मूल्यांकन के लिए सबसे अच्छे व्यक्ति खुद ही हैं। क्या जब आप दलित जाति के विद्यार्थियों से बात करते हैं तो आपकी आवाज भेदभाव वाली होती है?
- क्या आपने कभी विद्यार्थियों को एक-दूसरे के लिए जातिवादी अपमानसूचक शब्द बोलते सुना है? जाति-आधारित अपमानसूचक चुटकुलों के बारे में आप क्या सोचते हैं?

यह जाँच-सूची आपके बारे में निर्णय देने के लिए नहीं बनाई गई है। इसका उद्देश्य उन बहुत सारे तरीकों के बारे में आपको बताना है, जिसके माध्यम से भेदभाव जारी है। आप अपने अनुभव से भी इस जाँच-सूची में बहुत सारे प्रश्न जोड़ सकते हैं। प्रति तीन माह अथवा छह माह में आप इस सूची को एक बार देखें तथा अपने उत्तरों में आनेवाले बदलावों को नोट करें। इस प्रक्रिया के माध्यम से आपकी कक्षा की स्थिति बदलनी चाहिए और यही आपके लिए संतोष का विषय होगा/ होना चाहिए।

2.4 नए की खोज करने वाला बनें: कुछ नया करें

पुरस्कार-वितरण अथवा परिणाम-घोषणा के दिन अपने गाँव या इलाके के किसी विशिष्ट व्यक्ति को आमंत्रित करें।

वह कौन हो सकता है?

किसी बुजुर्ग दलित पुरुष या स्त्री के बारे में सोचें जो निरक्षर हो सकते हैं, जिनके बच्चे आपके विद्यालय में पढ़ रहे हो सकते हैं अथवा नहीं भी पढ़ रहे हो सकते हैं।

इससे विभिन्न समूहों में एक सकारात्मक संदेश जाएगा। इससे:

- दलित बच्चों का मनोबल बढ़ेगा।
- बुजुर्गों के प्रति सम्मान का भाव बढ़ेगा।
- गैर-दलित विद्यार्थियों के लिए विशेष रूप से शिक्षाप्रद होगा।
- दलित विद्यार्थियों को विद्यालय आने के लिए प्रेरित करेगा।
- दलित माता-पिता को अपने बच्चों को विद्यालय भेजते हुए प्रोत्साहन मिलेगा।
- कक्षा के बाहर तथा भीतर आपसी विश्वास तथा मित्रता का माहौल निर्मित होगा।

2.5 शिकायत-पेटिका

हम जानते हैं कि वंचित वर्ग के बच्चों के लिए भेदभाव, दुर्व्यवहार और प्रताड़ना (शारीरिक, मानसिक या शाब्दिक) के विरुद्ध शिकायतें दर्ज करवाना संभव नहीं होता। यह हमारी वर्तमान सामाजिक व्यवस्था का, चाहे वह कक्षा हो या समाज, स्वयं एक संकेतक है। अपने विद्यार्थियों से कहें कि वह शिकायत-पर्ची पर अपना नाम लिखें अथवा नहीं।

पहले चरण में

शिकायत पेटिका प्रत्येक कक्षा के शिक्षकों द्वारा ही खोली जानी चाहिए। शिक्षकों को आपस में उन शिकायतों को पढ़ना चाहिए तथा सुधारात्मक उपाय करने के लिए विचार करना चाहिए। आप अभियुक्त को बुलाकर उससे कुछ कहें या न कहें, लेकिन पीड़ित विद्यार्थी को बुलाकर अवश्य बात करें।

दूसरे चरण में

शिक्षकों और विद्यार्थियों की एक समिति होनी चाहिए, जो शिकायतों के बारे में जाँच करे। समिति का निर्माण विद्यार्थियों के व्यापक प्रतिनिधित्व के आधार पर होनी चाहिए। विद्यार्थियों को समिति में पर्याप्त अवसर दें, ताकि मामलों के बारे में वे ठीक से विचार कर सकें। यह बात रेखांकित करें कि इस समिति का उद्देश्य दंडात्मक नहीं, सुधारात्मक है।

तीसरे चरण में

समिति पूर्णत: विद्यार्थियों द्वारा निर्मित होनी चाहिए जो शिक्षकों को समय-समय पर रिपोर्ट करती रहे। यह अभ्यास लोकतांत्रिक कार्यपद्धति का महत्व बताता है, विद्यार्थियों को अपनी बात रखने के लिए प्रोत्साहित करता है, प्रतिनिधित्व तथा उत्तरदायित्व लेने की शिक्षा देता है। निर्णय लेने में शिक्षकों और छात्रों के बीच की गैर-जरूरी दूरी को खत्म करता है।

अध्याय - 10

नई सीख

एक प्रोफेसर ने जैन-दर्शन के बारे में एक सेमिनार में सुना और वह उससे बौद्धिक रूप से इतना प्रभावित हुए कि उन्होंने इसे पूरी तरह सीखने का निर्णय लिया। बिल्कुल अपने स्वभाव के अनुरूप उन्होंने अपने-आपको जैन-दर्शन के अध्ययन में झोंक दिया, उससे संबंधित हर किताब, हर लेख जो भी उनके हाथ लगा, पढ़ना शुरू कर दिया। दो साल बाद उन्होंने महसूस किया कि वह उसका विशेषज्ञ बन गए हैं तथा उन्होंने उसके एक सूत्र-विशेष पर एक लेख लिखा और एक सम्मेलन में उसे पढ़ा, जिसकी काफी प्रशंसा हुई। अब उन्हें लगा कि उन्होंने जैन-दर्शन की विशेषज्ञता हासिल कर ली है, जब तक कि उनकी मुलाकात सम्मेलन के आखिरी दिन एक बुजुर्ग व्यक्ति से न हो गई, जिसने उनसे कहा कि यदि सचमुच वे जैन-दर्शन के बारे में जानना चाहते हैं तो उन्हें एक जैन-शिक्षक के पास जाना चाहिए।

कुछ दिनों बाद वह प्रोफेसर बहुत मुश्किल से एक पहाड़ी पर पहुँचे, जहाँ एक शाम वे जैन-शिक्षक के पास गए। शिक्षक ने उनका स्वागत किया तथा उनसे चाय पीने को पूछा। प्रोफेसर ने अपनी स्वीकृति दे दी। शिक्षक ने प्रोफेसर के सामने एक बड़ा कप रख दिया और मौन भाव से केतली से उसमें चाय डालने लगे। प्रोफेसर इस मौन से घबड़ाकर उस शिक्षक से जैन-दर्शन के बारे में अपनी समझ बताने लगे।

उन्होंने कहा, 'शिक्षक, यद्यपि मैं आपसे जैन-दर्शन जानने अवश्य आया हूँ लेकिन मैंने पहले ही इसकी विशेषज्ञता हासिल कर ली है। मैंने इस पर पेपर भी पढ़ा है।' और वह अपने लेख के बारे में डींग हाँकने लगे तथा बताने लगे कि कैसे उनकी प्रशंसा हुई थी। शिक्षक सिर्फ उसके कप में चाय डालते रहे। कुछ क्षण पश्चात चाय कप से गिरने लगी। प्रोफेसर ने अपना एकालाप जारी रखा और शिक्षक भी पूर्ववत् चाय डालते रहे। अंततः चाय जब प्रोफेसर की गोद में गिरी, तब उनकी तंद्रा टूटी।

"आप क्या कर रहे हैं, शिक्षक?" वह चिल्लाए।

"देखिए, मैं तो इस कप में चाय डालने की कोशिश कर रहा हूँ लेकिन यह कप भरा हुआ है। वस्तुत: मुझे आशंका है कि आप भी इस कप की तरह हैं ..... जैन-दर्शन के बारे में अपने ज्ञान से आप इतने लबालब हैं कि जो कुछ मैं उसमें डालना चाहूँगा, वह बाहर गिर जाएगा। अत: यदि आप जैन-दर्शन के बारे में सीखना चाहते हैं तो घर जाइए, अपना कप खाली कीजिए, और फिर आइए, तब हम जैन-दर्शन के बारे में बात करेंगे।"

विश्वस्तर पर शिक्षाविद तथा मनोवैज्ञानिक यह महसूस करते हैं कि सीखने की प्रक्रिया में सबसे कठिन होता है, पहले से सीखे हुए को छोड़ना। ऐसा इसलिए, क्योंकि सीखे हुए को भूलना न केवल एक नए विचार को स्वीकार करने की सामर्थ्य चाहता है, बल्कि यह पुराने विचार पर संदेह करने, उस पर प्रश्न करने तथा उसकी कमी या कमजोरी को स्वीकार करने की क्षमता की भी माँग करता है। यह कभी आसान नहीं होगा। आप कोशिश कर सकते हैं तथा कुछ नया सीख सकते हैं। लेकिन यह स्वीकार करना कि अब तक जिस विचार को सच या सच्चा ज्ञान मानकर चल रहा था, वह वास्तव में एक गलती थी, एक चुनौती स्वीकार करने जैसा है। वह हमारे अतीत, अब तक हम जो कर रहे हैं, उसे अस्थिर करने का खतरा उत्पन्न कर देता है, क्योंकि यह हमारे वर्तमान तथा भविष्य को फिर से निर्देश देने की संभावना रखता है। किंतु एक नई शुरुआत तब तक असंभव है, जब तक आप में सीखे हुए को भूलने का नैतिक साहस न हो।

जाति से संबंधित सामाजिक कुप्रथाओं तथा रीतियों को भूलना और भी मुश्किल है, क्योंकि वे हमारे सांस्कृतिक उपचेतन का हिस्सा हैं। विशेषाधिकार प्राप्त लोग आसानी से तथा प्राय: परंपरा के नाम पर 'विरासत' के लाभ-क्षेत्र में आ जाते हैं, बिना यह सोचे-विचारे कि गैर-विशेषाधिकार प्राप्त लोगों को ऐसी सुविधा क्यों नहीं मिल पाई। जो लोग उत्पीड़क जाति-व्यवस्था का दर्द झेलते हैं, वे अपनी पहली सामाजिक भाषा के रूप में ऐसी परंपरा के त्याग और अस्वीकार को अपनाते हैं। यह उनके गरिमापूर्ण जीवन के लिए सबसे जरूरी है। यह उनके लिए किसी भी तरह के सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा के लिए भी जरूरी है। एक शिक्षक के नाते, मौजूदा सामाजिक मानदंडों को बदलने तथा जाति-व्यवस्था को तोड़ने की दिशा में हमें जो पहला कदम उठाना है उससे पहले क्या करना चाहिए, इसके बारे में गहराई से सोचना चाहिए।

आइए, अब एक उदाहरण लेते हैं कि सामान्य वर्ग के बच्चों से हम कैसे बात करते हैं तथा दलित जाति के बच्चों से कैसे बात करते हैं। सामान्यतया हमारी भाषा असम्मान तथा शक्ति के दुरुपयोग से निर्धारित होती है। यदि हम यह निर्णय लेते हैं कि हम बच्चों से उसी

तरह बात करेंगे, चाहे वे किसी भी जाति के हों, जैसे बड़ों से अथवा हमउम्रों से करते हैं तथा कभी भी अपमानसूचक, कठोर तथा धमकी-भरी भाषा का प्रयोग नहीं करेंगे, तो आपको ऐसी कला विकसित करने में कितना समय लगेगा? सीखना कठिन है, लेकिन सीखे हुए को भूलना उससे भी कठिन।

जातिगत भेदभाव के प्रति संवेदनशीलता अर्जित करने में हमारी आंतरिक आवाज सबसे बड़ी चुनौती होगी, विशेषकर 'सब कुछ पता है' वाला बर्ताव। जिस तरीके से जाति-व्यवस्था तथा जाति-आधारित पूर्वाग्रह हमारे विद्यालयों तथा कक्षाओं में प्रविष्ट कर जाते हैं, वे रोके जा सकते हैं यदि हम थोड़े सजग तथा बदलाव के प्रति सकारात्मक रहें तो।

आपका पृष्ठ

1. (क) उन तीन चीजों का उल्लेख करें, जिन्हें अपने चेतन जीवन में आपने भुला दिया है।

   (ख) ऐसा करने का कारण बताएँ।

   (ग) इसमें जिन दिक्कतों का आपको सामना करना पड़ा, उनका जिक्र करें।

2. उन तीन चीजों के नाम बताएँ, जिन्हें आप भविष्य में भूलना चाहेंगे?

आइए, शुरुआत करें

जब मैं पाँच साल का था, मैं एक मेले में खो गया था। लोगों का सैलाब, मेले का कर्णभेदी कोलाहल, लोगों के परेशान और प्रसन्न चेहरे, अचानक इन सबसे ऐसा लगने लगा कि मेरा जीवन इन सबके बीच समाप्त हो जाएगा। मैं अपनी भयातुर आँखों से चारों तरफ देखता और हर तरफ मुझे लोगों का झुण्ड दिखाई देता– सभी अपरिचित तथा अज्ञात। जब मुझे अपने परिवार के लोग नहीं मिले तो मैं रोने लगा, मेरा दिमाग ठहर गया। ऐसा लगा, जैसे मैं इस विशाल दुनिया में अकेला हूँ। बचपन में छोटी से छोटी चीज कितनी बड़ी लगती है।

मैं उस औरत का चेहरा कभी नहीं भूल सकता, जिसने मुझे मेले से बाहर निकाला तथा मुझे मेरे गाँव का रास्ता बताया। अपनी पूरी किशोरावस्था में वर्षों तक मैं जब कभी देवताओं और देवियों के बारे में सोचता, मुझे हमेशा वह चेहरा दिखाई देता, हमेशा मेरी तरफ मुस्कुराता हुआ। मैं यह कहानी आपको इसलिए नहीं बता रहा हूँ कि आप भी अपने किसी रक्षक को याद करें। मैं तो उस औरत की वह बात आपको बताना चाहता हूँ जो उसने मुझे मेले से बाहर निकालते हुए कहा था, वह मेला जो मुझे उस समय दुनिया की सबसे डरावनी चीज लगने लगा था।

"सुनो, जब कभी तुम खो जाओ," उसने एक दिव्य मुस्कुराहट के साथ कहा (आज भी मैं बिना अच्छे विशेषणों के उसके बारे में सोच नहीं सकता), "सबसे पहले तुम उस जगह को चिह्नित करो, जहाँ तुम हो।"

मुझे मेले में किसी भी जगह को चिह्नित करने का कोई मतलब नहीं सूझा, क्योंकि हर चीज, जहाँ मैं खड़ा था, वह भी हर क्षण बदलती जा रही थी।

"अपनी जगह को उन चीजों से चिह्नित करो जो वहाँ पर स्थायी हैं।" वह शायद मेरा दिमाग भी पढ़ रही थी।

ऐसा कौन कर सकता था? मैं वर्षों तक अपने दोस्तों को बताता कि वह सचमुच देवी थी।

"बार-बार अपने को मत खोओ," उसने बहुत शांत भाव से तथा आँखों में मौजूद गहरी बुद्धिमत्ता के साथ कहा।

जिस बच्चे का दिल ट्रेन से भी अधिक तेज गति से दौड़ रहा हो, उसके लिए इन शब्दों का क्या अर्थ हो सकता था? मैं सिर्फ अपने बाबूजी और माँ के साथ होना चाहता था।

"और अब सबसे महत्वपूर्ण चीज याद रखो। सिर्फ चार ही दिशाएँ होती हैं, जिनमें कोई जा सकता है (पृथ्वी पर, बाद में मैंने जोड़ा) और एक में एक ही बार।"

मेरी अधीरता अब सारी हदें पार कर रही थी।

"हर दिशा में जाओ और अपनी चिह्नित जगह पर वापस लौट आओ, जब तक कि तुम्हें सही दिशा न मिल जाए।"

उसका हाथ पकड़कर जब मैं मेले से बाहर आया और गहरे हरे सरसों के खेतों के एक मील पार अपने गाँव को देखा तो मुझे लगा, मैंने स्वर्ग को पसरा हुआ देख लिया है। दूरी के कारण गाँव के घर छोटे-छोटे धब्बे की तरह दिख रहे थे, ऐसा लग रहा था, जैसे छोटे-छोटे तारों की मंदाकिनी धरती पर सो रही हो। बहुत दिनों के बाद जब मेले में खो जाने तथा फिर से अपना रास्ता खोज लेने की अपनी साहसिक कहानी सुनाने की मेरी ऊर्जा शांत हो चुकी थी, मैंने 'देवी से साक्षात्कार' वाली घटना का एक-एक ब्यौरा याद करना शुरू किया।

यकीन करें, हर बार जब मैं कंक्रीट के शहरी जंगलों तथा सर्पीले फ्लाइओवरों में खो जाता हूँ तो उसकी सलाह याद करता हूँ – उस जगह को चिह्नित करो जहाँ तुम हो! एक ही जगह में दो बार मत खोओ! चार ही दिशाएँ हैं, जहाँ कोई जा सकता है, और एक बार में एक ही दिशा में जाया जा सकता है!